ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 2, February 2017

भारत में बौद्ध धर्म के उदय की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

– डॉ. महेन्द्र चौधरी
व्याख्याता (इतिहास),
सेठ आर.एल.सहरिया राजकीय महाविद्यालय,
कालाडेरा, जयपुर

सारांश : बौद्ध धर्म भारत की श्रमण परम्परा से निकला धर्म और दर्शन है। इसके प्रस्थापक महात्मा बुद्ध शाक्यमुनि (गौतम बुद्ध) थे। वे 563 ईसा पूर्व से 483 ईसा पूर्व तक रहे। ईसा पूर्व छठी शताब्दी में महात्मा बुद्ध का आविर्भाव हुआ। उनका यह काल परिवर्तन व बौद्धिक उन्नति के लिए प्रसिद्ध था। साथ ही यह युग समस्त प्राचीन विश्व में व्यापक धर्म सुधार का युग भी था। बौद्ध धर्म की उत्पत्ति के अनेक कारण प्रस्तुत किए गये हैं; क्योंकि किसी एक कारण को बौद्ध धर्म की उत्पत्ति में प्रमुख नहीं माना जा सकता है। भारतवर्ष के इतिहास में समय–समय पर अनेक क्रांतिकारी सुधारक जन्म लेते रहे है, जिनमें महात्मा बुद्ध का स्थान ऊँचा है।

संकेताक्षर : बौद्ध धर्म, बौद्ध धर्म की उत्पत्ति, बौद्ध धर्म ऐतिहासिक पृष्ठभूमि।

प्रस्तावना

भारतीय इतिहास में बौद्ध धर्म की तिथि–निर्धारण के समान बौद्ध धर्म के उद्भव ने भी कई तरह के विवादों को उत्पन्न किया है। प्रारम्भ में कुछ विद्वानों की मान्यता थी कि बौद्ध धर्म विभिन्न प्रकार की प्राक्–बौद्ध काल में उत्पन्न परिस्थितियों के विकास (जैसे–याज्ञिक कर्मकाण्डों द्वारा जीव हिंसा, अन्धविश्वास तथा बौद्धिक गतिरोध का उत्पन्न होना, लिंग एवं जाति आधारित असमानता आदि) के विरूद्ध एवं आन्दोलन मात्र था। जी.सी. पाण्डेय [1] तथा जी.एस. पी. मिश्र[2] ने बौद्ध धर्म के उद्भव को वैदिकोत्तर तथा प्राक्–वैदिक श्रमण परम्परा के पुनरूत्थान के रूप में देखा है, जो ब्राह्मण धर्म से परे विरक्ति पर आधारित था। उनके विचार में यह परम्परा, जिसने संसार निरोध तथा संसार मुक्ति पर जोर दिया, ऋग्वैदिक काल में कार्यशील परम्परा द्वारा दबा दी गई थी। लेकिन श्रमण परम्परा ने स्वयं को पुनर्प्रतिष्ठित किया तथा इसे दुःखी मानवता द्वारा, पाण्डेय के अनुसार तब स्वीकार किया गया जब कार्य तथा पूजा, धन तथा कल्याण, मनुष्य तथा प्रकृति की वैदिक समता कर्कशतापूर्वक तोड़ दी गयी।[3] बौद्ध धर्म सबसे अधिक सफल हुआ

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 2, February 2017

इसलिए क्योंकि यह प्राक्–वैदिक तथा वैदिकोत्तर श्रमण परम्परा की अत्यधिक व्यवस्थित तथा सुस्पष्ट अभिव्यक्ति था। हांलाकि यह नकारा नहीं जा सकता कि बौद्ध धर्म ने बहुत सी प्राक्–बौद्धकालीन संकल्पनाओं को ग्रहण करने के साथ–साथ उनमें संशोधन किया परन्तु इस परिकल्पना की कमी यह है कि इसमें बौद्ध धर्म की मौलिकता तथा पूर्णता की ओर ध्यान नहीं दिया गया।[4]

प्रो. लालमणी जोशी का यह मत न केवल तर्कसंगत है, अपितु इतिहास द्वारा प्रमाणित भी है। भगवान बुद्ध के प्रथम पांच शिष्य ब्राह्मण ही थे। उनके महापरिनिर्वाण के तीन महीने पश्चात आयोजित 'प्रथम संगीति' के अध्यक्ष महाकाश्यप भी ब्राह्मण ही थे। इस प्रकार बुद्ध की विचारधारा को अपनाकर 'ब्राह्मणवाद' के विरूद्ध बिगुल बजाने वाले ब्राह्मणों की बौद्ध धर्म में न केवल भरमार रही है, अपितु उन्होंने इस विचारधारा का सम्यक नेतृत्व भी किया था। महान् सम्राट अशोक के समय इस विचारधारा के समर्थक 'तिस्स' भी मोग्गली ब्राह्मणी के पुत्र थे, जिन्होंने सम्राट को बुद्ध अनुयायी बनाकर विश्व में बौद्ध धर्म का प्रचार किया। उसके भी आगे सिद्धों के समय में प्रमुख 84 सिद्धों में ज्यादतर ब्राह्मण ही थे, इस प्रकार जब ऐसे तथ्य उपलब्ध होते हैं, तो यह नहीं कहा जा सकता कि बौद्ध धर्म की उत्पत्ति ब्राह्मण और क्षत्रिय वर्चस्व के संघर्ष का परिणाम था।

जी.एस. घुर्ये[5] तथा एन. दत्त जैसे सामाजिक वैज्ञानिकों ने सुझाव दिया कि बौद्ध धर्म तथा इसके समसामायिक मत ब्राह्मणों के विरूद्ध क्षत्रियों द्वारा सामाजिक वर्चस्व हेतु चलाए गए संघर्षों का परिणाम थे।[6] उनके अनुसार क्षत्रियों ने अपने महत्व का दावा उस समय करना शुरू किया जब ब्राह्मण याज्ञिक कर्मकाण्डों पर अपने एकमात्र प्रभुत्व द्वारा क्षत्रियों सहित समाज के अन्य वर्णों पर अपनी श्रेष्ठता स्थापित कर चुके थे। क्षत्रियों ने ब्राह्मणों के इस मिथ्याभिमान पर प्रहार करने के उद्देश्य से आम जनसमूह, विशेषकर समाज के विकासोन्मुख सम्पन्न वर्गों जैसे प्रभावशाली व्यापारियों की सहायता चाही। यद्यपि यह नहीं नकारा जा सकता है कि क्षत्रियों ने ब्राह्मणों के इस मिथ्याभिमान पर रोष प्रकट किया, परन्तु ऐसे रोष को ही बौद्ध धर्म जैसे आन्दोलनों के उद्‌भव की पर्याप्त व्याख्या नहीं माना जा सकता।[7]

बौद्ध धर्म के उद्‌भव को आर.एस. शर्मा[8] गंगा घाटी में लोहे के उपकरणों के बढ़ते हुए प्रयोग के परिणाम के रूप में देखते हैं। उनके अनुसार छठी सदी ई.पू. से लौह उपकरणों ने मध्य

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 2, February 2017

गंगा घाटी में खेती के उद्देश्य के साथ–साथ उपनिवेश (बस्ती) हेतु घनी वनस्पतियों को साफ करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। हालांकि वे यह भी स्वीकार करते हैं कि इस कार्य में आग ने भी सहायता की, परन्तु वे इस बात को मानने को तैयार नहीं थे कि जंगलों की सफाई में लौह उपकरणों की अपेक्षा किसी और चीज ने भी अग्रणी भूमिका निभाई। इस परिकल्पना के अनुसार अगर आग का प्रयोग किया भी गया होगा, तो भी जली हुई वनस्पतियों के ठूंठों को हटाना संभव नहीं रहा होगा।

सातवीं–छठी शताब्दी ई. पू. में बिहार के सारण जिले के चिरांद नामक स्थल से लोहे के साक्ष्य मिले है तथा लगभग छठी शताब्दी ई.पू. के अनेक लौह–मल एवं लगभग पांच उपकरण, जिनमें अधिकांश को पहचाना नहीं जा सकता, वैशाली में प्राप्त हुए है। दक्षिण बिहार में काले व लाल मृदभांडों के साथ लोहे का एक प्राचीनतम संसर्ग है। भागलपुर जिले में चंपा के प्राचीन स्थल में अनेक लौह–मल के पिंड प्राप्त हुए हैं। यह सब इस बात की ओर संकेत करते हैं कि छठी से पांचवीं शताब्दी ई.पू.में लौह धातु अभियांत्रिकी में पर्याप्त विकास हुआ था।

पश्चिमी उत्तरप्रदेश में हल की कृषि, संभवतः लोहे के फाल की सहायता से लगभग 600 ई.पू. प्रारम्भ हुई थी। इन नवीन कृषकों ने आगे बढ़ने के साथ–साथ लगभग 600–300 ई.पू. में अपने ज्ञान का विस्तार पूर्वी उत्तरप्रदेश तथा बिहार में भी किया। पूर्वोत्तर में आर्य संस्कृति के सीमांत क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की सामाजिक तथा भौतिक संस्कृति के मध्य विरोध की हम कल्पना कर सकते हैं। जिसमें एक ओर सीमित मात्रा में तांबे का व पत्थर के उपकरण व हथियारों का उपयोग करने वाले लोग थे और दूसरी ओर लोहे का प्रयोग करने वाले लोग। नवपाषाण–ताम्र पाषाण संस्कृति के पूर्व में रहने वाले लोग, दो आदिवासी और अनार्य थे। जंगलों को जलाकर व वृक्षों को काटकर ऊँचे क्षेत्रों में छोटे–छोटे भूमिखंडों में खेती करते थे।[9]

पश्चिमी उत्तरप्रदेश में कुरू–पंचाल क्षेत्र में यज्ञों में बलि द्वारा पशुधन का एक बड़ा भाग नष्ट हो रहा था। जो सम्भवतः कृषि अवस्था की भोजन संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति की परिष्कृत विधियां थी। शतपथ ब्राह्मण में, जिसकी रचना लगभग 600 ई.पू. में हुई थी, हम गौ–मांस भक्षण के संबंध में एक विवाद देखते हैं।[10] मज्झिमनिकाय में ऐसी उपमाओं का, बार–बार प्रयोग किया गया है।[11] अतः वैदिक तथा अवैदिक दोनों ही परम्पराओं में गाय–बैलों को

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 2, February 2017

मारने का प्रबंध था, जबकि हल के लोहे के फाल की खेती की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अब इनकी सुरक्षा आवश्यक थी। बौद्धों द्वारा पशुबलि का बहिष्कार तथा पशुओं की अहिंसा पर बल नव–कृषि की आवश्यकताओं के संदर्भ में नवीन महत्व प्राप्त करते हैं। गौतम बुद्ध ने लक्ष्य करके प्राचीनतम वैदिक यज्ञों की आलोचना की थी। प्राचीनतम बौद्ध ग्रंथ सुत्तनिपात अहिंसा को महानतम् गुण मानता है। इस तरह स्पष्ट समझा जाता था कि पशुधन पर कृषि निर्भर थी।

रामशरण शर्मा ने यह विचार प्रतिपादित किया है कि लोहे के हथियारों के प्रयोग से सैन्य सामग्री में एक क्रांति आ गई, तथा पूरोहितों की तुलना में योद्धाओं का राजनैतिक महत्व बढ़ गया। स्वाभाविक रूप से वे अन्य क्षेत्रों में समानता की स्थिति का दावा करने लगे। अनेक ग्रंथों में ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों के हितों के मध्य संघर्ष स्पष्ट है।[12] गौतम बुद्ध तथा महावीर की क्षत्रियोत्पत्ति की यह आंशिक रूप से व्याख्या करता है और इस तथ्य को भी स्पष्ट करता है कि प्राचीन बौद्ध ग्रंथ क्षत्रियों को पहला स्थान तथा ब्राह्मणों को दूसरा क्यों प्रदान करते हैं। करों के नियमित भुगतान द्वारा ही क्षत्रिय राजा संपोषित हो सकते थे। बुद्ध के काल के बौद्ध तथा ब्राह्मण दोनों ग्रंथ इस आधार पर कृषकों के उत्पाद में राज्य–अंश को उचित ठहराते है कि राजा लोगों को संरक्षण प्रदान करता है।[13]

बौद्ध धर्म को लौह–काल के द्वितीय चरण द्वारा निर्मित भौतिक वातावरण के उत्पाद के रूप में माना जा सकता है। इसका नकारात्मक पक्ष यह है कि इसने नवीन भौतिक संस्कृति के विकास में व्यवधान डालने वाली सामाजिक तथा धाार्मिक परम्पराओं को महत्वहीन बना दिया और द्वितीय लौह चरण में पोषित अंजन जातिकृत वर्ग आधारित एवं राज्य आधारित सामाजिक–आर्थिक संरचना को सकारात्मक समर्थन प्रदान किया।[14]

आगे चलकर जब पिटवें लोहे की जगह स्टील का प्रयोग होने लगा तब ये उपकरण टिकाऊ तथा अधिक उपयोगी साबित हुए एवं अद्यतन ये प्रयुक्त हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त यह भी बताया गया है कि जिन केन्द्रों की अब तक खुदाई हो चुकी है (जैसे कि चम्पा, राजगृह, वाराणसी आदि) ये प्रशासनिक, व्यावसायिक, शिल्पकारी या धार्मिक केन्द्र थे सभी कृषि कार्य में उपयोग में लाए जाने वाले औजारों की प्राप्ति के लिए उपयुक्त स्थान नहीं है। इसके अलावा विभिन्न बस्तियों की खुदाई में प्रयुक्त विधियों की खामियों को भी इन उपकरणों की अनपुस्थिति

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 2, February 2017

(अभाव) का दोषी ठहराया गया है। कम से कम 500 ई.पू. में आहत मुद्रा के निर्माण में लौह तकनीक के प्रयोग जैसे कुछ अप्रत्यक्ष साक्ष्य भी प्रस्तुत किये गए हैं। बहुत बड़े पैमाने पर लकड़ी की संरचनाओं की उपस्थिति जो मैगस्थनीज ने देखी थी, उन्हें भी मात्र लौह तकनीक के प्रयोग के परिणाम के रूप में देखा गया है। इस प्रकार यह तर्क दिया गया है कि शिल्प उद्योग तथा कुछ व्यवसायों की अभूतपूर्व वृद्धि लौह तकनीक द्वारा आरम्भ हुई थी। संक्षेप में, इस पैमाने पर लौह तकनीक के उपयोग का परिणाम कृषि क्षेत्र में आए क्रांतिकारी परिवर्तन के रूप में देखा जाता है जिससे अधिशेष उत्पादन होने लगा और उस अधिशेष उत्पादन ने ही व्यापार–वाणिज्य एवं नगरीकरण को जन्म दिया जिससे अन्ततोगत्वा बौद्ध धर्म का उद्भव हुआ।[15]

परन्तु लोहे की क्रांतिकारी भूमिका का सिद्धान्त बहुत सारे विद्वानों की स्वीकृति नहीं प्राप्त कर सका। निहाररंजन रे ने आरम्भ से ही इस आधार पर आपत्ति उठाई थी कि गंगा–यमुना घाटी में मौर्य शासन के आरम्भ से पहले लौह तकनीक और लौह उपकरणों का प्रचलन इस स्तर पर था कि उनसे सामाजिक परिवर्तन हुए, जिन्हें लोहे के प्रयोग से आए तकनीकी परिवर्तनों का परिणाम बताया गया है। उन्होंने आगे लिखा है कि पुरातत्वीय साक्ष्य लौह तकनीक के उपयोग द्वारा बड़े पैमाने पर वनों की समाप्ति को नहीं दर्शाते। इसके अतिरिक्त लौह तकनीक ने न तो गुणात्मक रूप से और न ही परिणात्मकरूप से इतनी अधिक विविधता प्राप्त की थी कि वह महत्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन ला सकें।[16]

लकड़ी के फालयुक्त हलों का प्रयोग कृषि कार्य में होता रहा होगा, परन्तु कुदाली द्वारा कृषि का प्रचलन ही अधिक सर्वव्यापक रहा होगा। आरम्भिक बौद्ध साहित्य में कुदाल[17] जैसे शब्दों का प्रयोग भी शायद इसी ओर संकेत करता है। खुदाई में कुछ कुदालियाँ प्राप्त हुई है और लोह तकनीक का पूर्ण प्रयोग मौर्यो से पहले नहीं हुआ था।[18] यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि हल का हरिस (नंगल–ईसा) किसी भी वस्तु का लकड़ी से लेकर यहाँ तक कि हाथी दांत का भी बना हो सकता था।[19] हांलाकि उत्तरी काले परिष्कृत मृदभांडों के स्तर से लोहा एक आधारभूत तकनीकी घटक बन गया था परन्तु प्रारम्भिक उत्तरी काले परिष्कृत मृदभांड स्तर वाले किसी भी केन्द्र से विस्तृत पैमाने पर लोहे के उपकरण के उपयोग का साक्ष्य नहीं मिलता। मंद गतिमान समाज में लोहे का प्रभाव भी मंद ही रहा होगा और इसने ''समाज की भौतिक समृद्धि

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 2, February 2017

में कोई तेज गति पैदा नहीं की।'' इस प्रकार लोहे की भूमिका के उत्प्रेरक की अपेक्षा स्थिरकारी से अधिक नहीं कहा जा सकता। यहाँ पर यह कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण गंगा घाटी में लोह की जानकारी लगभग 1000 ई.पू. या उसके आस–पास के समय से थी और लौह तकनीक का विस्तृत प्रसार गंगा घाटी में पहली सहस्राब्दी ई.पू. के प्रथम भाग में हो चुका था।

इस तथ्य के बावजूद कि गंगा घाटी में लोहे का प्रचलन लगभग 1000 ई.पू. से था हमें उत्तरी काले परिष्कृत मृदभांड काल तक सामान्य बस्तियों के श्रेणी–आकारों में कोई खास परिवर्तन दृष्टिगोचर नहीं होता, जबकि इस समय तक नगरीकरण की प्रक्रिया एक वास्तविक बन चुकी थी। यदि गंगा घाटी के आरम्भिक ऐतिहासिक नगरीकरण की प्रक्रिया में लोहा ही मुख्य कारक था तो श्रेणी आकारों तथा बस्तियों की रचना में यह उपक्रम चित्रित घूसर मृदभांड काल में ही हो जाना चाहिए था।

इस प्रकार से यह अनुमान करना उचित होगा कि गंगा घाटी में लोह तकनीक के पूर्ण रूप से विकसित होने के पूर्व इसका विकास काफी लम्बी अवधि, कम से कम ई.पू. 700 से मौर्यकाल के मध्य में अवश्य हुआ होगा। इस नई तकनीकी अवयव ने निश्चित रूप से आर्थिक आधार को मजबूत किया होगा जिसे प्राथमिक रूप से नव–पाषाण, ताम्र–पाषाणवासियों द्वारा प्रारम्भ किया गया होना, परन्तु इसे निश्चित तौर पर नहीं लिया जा सकता कि लोहे का उद्भव ही गंगा घाटी में नगरीकरण का आधारीय प्रेरणार्थक कारक था। गंगा घाटी में नगरीयकरण का विकास अचानक नहीं हुआ। इसका विकास गंगा घाटी के समाज के समग्र विकास का अभिन्न अंग था। विभिन्न संस्थाएं, जिन्होंने गंगा घाटी में नगरीकरण के उद्भव तथा विकास में भूमिका अदा की, उनके विकास का एक लम्बा इतिहास था। लगभग सभी बुद्धकालीन महत्वपूर्ण नगर, महत्वपूर्ण राज्यों की राजधानीयाँ थे और इस रूप में वे राजनीतिक सत्ता के केन्द्र थे। वे सभी ग्रामीण बस्तियों के विस्तार थे। वहाँ समय के साथ–साथ शासक वर्गों ने स्वयं को ठाट–बाट एवं गौरव से संगठित एवं स्थापित कर लिया था। इसके अलावा 5वीं सदी ई.पू. में इन बस्तियों की संख्या तथा आकार जिन्हें नगरीय कहा जा सकता हो इतने विस्तृत नहीं थे कि उनके लिए उत्पादन–पद्धति में बड़े पैमाने पर तथा अचानक परिवर्तन की जरूरत पड़ी हो।[20]

प्रो. जी.सी. पाण्डे ने बौद्ध धर्म के उद्भव से सम्बन्धित अपने विचारों को इस प्रकार प्रस्तुत

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 2, February 2017

किया है– ''कई पुराने लेखकों द्वारा यह विचार दिया गया है कि बौद्ध धर्म और जैन धर्म की उत्पत्ति ब्राह्मणों के धर्म के भीतर गैर कर्मकांडी प्रवृत्ति के कारण हुई। तथापि हमने यह प्रदर्शित करने की कोशिश की है कि वैदिक दायरे में कर्मकाण्ड विरोधी प्रवृत्ति अपने आप में भिक्खुवाद के कारण है, जो वेदों के पहले का है। जैन धर्म इस पूर्व वैदिक धारा की सततता निरूपित करता है, जिसमें से बौद्ध धर्म भी निकलता है। यद्यपि यह वैदिक विचारों से काफी प्रभावित है। वेदवाद के विरोध के रूप में और उसके सुधार के रूप में बुद्धधम्म (बुद्धवाद) की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्रचलित विचार बाद के वैदिक इतिहास की भ्रामक समझ पर आधारित है जो ऐतिहासिक सुसंगता, इतिहास–ज्ञान की अज्ञानता और वेदों से पूर्व किसी सभ्यता के नकारने के परिणामस्वरूप प्रचलन में है।[21]

डॉ. पाण्डुरंग वामन काणे[22] ने बौद्ध धर्म के उदय को लेकर अपने विचार स्वरूप अपनी कृति ''धर्मशास्त्र का इतिहास'' में चर्चा इस प्रकार की है– ''बुद्ध ने न तो यह महसुस किया अथवा न ही उन्होंने दावा किया कि वे नए धर्म का प्रवर्तन कर रहे हैं और न ही उन्होंने हिन्दु धर्म और इसकी सभी प्रथाओं और आस्थाओं का परित्याग किया। बुद्ध ने अपने कुछ उपदेशों में आदर के साथ वेदों और हिन्दू ज्ञानी व्यक्तियों का संदर्भ दिया। उन्होंने यौगिक प्रथाओं और ध्यान के महत्व को भी मान्यता दी। उनके उपदेशों में उनके समय के हिन्दुओं के बीच प्रचलित कई आस्थाएं शामिल थीं, जैसे कर्म, पुनर्जन्म और ब्राह्मण बुद्ध के उपदेशों का एक बहुत बड़ा भाग था।

ट्रेवरलिंग के अनुसार गंगाघाटी क्षेत्र में कृषि के विकास ने अत्यधिक सघन आबादी एवं नगरीकरण को जन्म दिया और बदले में नगरीकरण ने सामाजिक स्तर पर व्यक्तिवाद को तथा राजनीतिक स्तर पर निरंकुश राजतंत्र को जन्म दिया। व्यक्तिवाद एवं राजतंत्रवाद के विकास ने व्यक्ति की नैतिक एवं आध्यात्मिक सोच को अस्त–व्यस्त कर डाला। इस दुविधा ने मानवीय परिस्थितियों के प्रति असंतोष पैदा किया और बुद्ध के लिए व्यक्तिगत दुःखों की यह बात ही उनके मानवीय दशा के विश्लेषण का आरम्भिक बिंदु बनी।[23]

नगरीयकरण ने बौद्ध धर्म को उत्पन्न किया और इससे भी अधिक इसकी शीघ्र लोकप्रियता तथा भौतिक आधार में निश्चित रूप से उसने प्राणधार का कार्य किया। बाद के

IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 2, February 2017

दिनों में इस नगरीकरण का ह्रास बौद्ध धर्म के पतन का एक महत्वपूर्ण कारण बना क्योंकि उसने बौद्ध आन्दोलन के सामाजिक तौर पर कई महत्वपूर्ण आधारशिलाओं को अन्दर से खोखला कर दिया।[24] हाथी पर सवारी करने वाले राजाओं से युक्त नगरीय महल बुद्ध काल की विशेषता थी। इसके अतिरिक्त बोली का स्वरूप भी नगरीय सभ्यता के उद्‌भव को प्रतिबिम्बित करता है।[25] नगरीकरण के उद्‌भव के साथ–साथ विभिन्न प्रकार की नई सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा राजनीतिक शक्तियाँ अस्तित्व में आई। बुद्ध के काल में नगरीय केन्द्रों के उद्‌भव, निरूपित व्यापारिक मार्गों, मुद्रा–प्रणाली तथा व्यापार–वाणिज्य ने एक नए तथा शक्तिशाली व्यापारी साहूकार वर्ग को जन्म दिया, जहां से श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक जैसे बौद्ध धर्म के महानतम् संरक्षक आए। इस नए व्यापारिक वर्ग के साथ–साथ एक नई राजव्यवस्था उस समय उभर रही थी। जब बुद्ध अपने लम्बे धर्मशासन के 45 वर्ष पूरे करने वाले थे।[26] इस राजनीतिक परिवर्तन के विशिष्ट प्रतिनिधि थे मगध के राजा बिम्बिसार और कौशल के राजा प्रसेनचित जिन्हें बुद्ध ने अपने व्यक्तिगत मित्र तथा संरक्षक बताया। नए प्रकार की सेनाओं तथा युद्ध उपकरणों के साथ–साथ नए व्यापारिक वर्गों की स्पष्ट आवश्यकताओं ने इन राज्यों की शक्ति को आधार प्रदान किया।[27]

विभिन्न नगरीय केन्द्रों जैसे वैशाली (अम्बपालि) हत्थिनीपुर (सेरिनी) आदि की गणिकाओं को नये समाज में मान–सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। बौद्ध धर्म ने भी इनकी निन्दा नहीं की। बौद्ध धर्म द्वारा संघ में प्रवेश के लिए जहां एक ओर नवयुवकों, ऋणियों, सैनिकों, दासों, रोगियों तथा विवाहित स्त्रियों के लिए विभिन्न प्रकार के प्रतिबन्ध लगाए गये थे, वहीं दूसरी ओर गणिकाओं को धर्म में प्रवेश की स्वतंत्रता थी। के.टी.एस. सराओ ने अपनी पुस्तक ''ओरिजिन एंड नेचर ऑफ एंशिएट इंडियन बुद्धिज्म'' में भारतीय बौद्ध धर्म के नगरीय चरित्र को प्रभावशाली रूप से निम्न तालिकाओं द्वारा प्रमाणित किया है–

जन्म स्थान	आवृत्ति	प्रतिशत
नगरीय	223	84.77
ग्रामीण	041	15.63
योग	267	100.00

तालिका 1 : जातकों के बोधिसत्वों के जन्म स्थान

Copyright to IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 2, February 2017

जन्म स्थान	आवृत्ति	प्रतिशत
नगरीय	1289	95.74
ग्रामीण	0086	06.26
योग	1375	100.00

विनय पिटक तथा सुत्त पिटक में वर्णित व्यक्तियों के मूल निवास स्थान

बौद्ध धर्म का नगरीय चरित्र तालिका 2 से अधिक सत्यापित होता हे। पालि निकाय तथा सुत्त पिटक में वर्णित सभी व्यक्तियों में से 1375 व्यक्तियों की मूल पृष्ठभूमि की जानकारी उपलब्ध है। इनमें से 1289 व्यक्ति जो की कुल का 95.74 प्रतिशत है नगरीय स्थानों से आते हैं जबकि मात्र 86 व्यक्ति जो 6.26 प्रतिशत हैं, ग्रामीण स्थानों से।

व्यवसाय	आवृति	प्रतिशत
राजा/राजकुमार	86	37.55
व्यवसायी/धनी व्यक्ति	57	24.89
उच्च अधिकारी	54	23.58
निम्न व्यवसाय	32	13.98
योग	**229**	**100.00**

बोधिसत्वों की व्यावसायिक पृष्ठभूमि

इस प्रकार तालिका 3 में भी इस तर्क की पुष्टि होती है। बोधिसत्व के 229 जन्मों में, जिनमें कि बोधिसत्व की व्यावसायिक पृष्ठभूमि उपलब्ध है, केवल 32 बार अर्थात् 14 प्रतिशत से भी कम बार उन्होंने या तो निम्न व्यावसायिक वर्ग में जन्म लिया या उसे ग्रहण किया। इसकी तुलना में 86 प्रतिशत से भी अधिक बार वे या तो राजा/राजकुमार या धनी व्यावसायी या फिर उच्च राज्य अधिकारी हैं। जातकों के साथ–साथ पालि विनय तथा सुत्त पिटक के अन्य ग्रंथों में भी उच्चवर्गीय व्यवसाय, नगरीय पृष्ठभूमि तथा इनकी चारित्रिक विशिष्टता को वरीयता देना स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

जातकों में बोधिसत्व और आनन्द के बाद सबसे लोकप्रिय पात्र अनाथपिण्डिक है। यह उल्लेख करना रूचिकर होगा कि जहां प्राक्–बौद्ध साहित्य लगभग एकान्तिक रूप से अपनी पृष्ठभूमि को ग्रामीण परिवेश में रखता है, वहीं प्रारम्भिक बौद्ध साहित्य नई नगरीय संस्कृति को

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 2, February 2017

अभिव्यक्त करता है।[28] यह बड़ी विचित्र बात है, वस्सावस की संस्था जिसने मठ (आवास) की संस्था का निर्माण किया ने उसी का सामाजीकरण कर दिया, वो मुख्य तौर पर एक असामाजिक आन्दोलन के रूप में आरम्भ हुआ था।[29] इसके अतिरिक्त आरम्भिक बौद्ध अभिजात्य वर्ग ने स्पष्ट रूप से धन एवं तडक–भड़क के लिए अपनी दुर्बलता को दर्शाया था। उनमें से ज्यादातर यहाँ तक कि स्वयं बुद्ध ने अधिकांश समय नगरीय केन्द्रों के आस–पास बिताया।[30]

अंततः विभिन्न विद्वानों की बौद्ध धर्म की उत्पत्ति के लेखों को पढ़ने के पश्चात् यह समझा जा सकता है कि किसी एक कारण को बौद्ध धर्म की उत्पत्ति का प्रमुख कारण मानना गलत होगा। इस धर्म की उत्पत्ति में विभिन्न कारण प्रमुख रहे जिनका वर्णन विभिन्न विद्वानों द्वारा किया जा चुका है। जिनमें भौतिक व सैद्धान्तिक कारण महत्वपूर्ण माने जाते है। इनमें भौतिक कारणों में सबसे प्रमुख कारण लौह तंत्र का प्रयोग रहा। वैदिक काल के अन्तिम समय में लौह तकनीक के विकास एवं उसके प्रयोग के परिणामस्वरूप समाज में गुणात्मक परिवर्तन आया था तथा इसने गंगा घाटी के नगरीकरण को जन्म दिया। इस प्रकार बौद्ध धर्म के उद्भव को गंगा घाटी में लोहे के उपकरणों के बढ़ते हुए प्रयोग के परिणाम के रूप में देखा जा सकता है।

संदर्भ

1 पाण्डेय, जी.सी., स्टडीज इन द ऑरिजन ऑफ बुद्धिज्म, पृ. 251–332
2 मिश्रा, जी.एस.पी., द एज ऑफ विनय, पृ. 36
3 पाण्डेय, जी.सी., स्टडीज इन द ऑरिजन ऑफ वुद्धिज्म, पृ. 62
4 सराओ, के.टी.एस., ओरिजिन एंड नेचर ऑफ एंशिएट इंडियन बुद्धिज्म, पृ. 61
5 धुर्ये, जी.एस., कास्ट एण्ड क्लास इन इण्डिया, पृ. 671
6 दत्त, एन., आरिजिन एण्ड ग्रोथ ऑफ कास्ट इन इंडिया, पृ. 108–109
7 सराओ, के.टी.एस., आरिजिन एण्ड नेचर ऑफ एशियंट इंडियन हिस्ट्री, पृ. 61
8 शर्मा, आर.एस., पर्सपेक्टिव इन सोशिएल एण्ड इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ अर्ली इंडिया, पृ. 120
9 शर्मा, आर.एस., पर्सपेक्टिव इन सोशिएल एण्ड इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ अर्ली इंडिया,पृ. 168–169
10 कोसम्बी, धर्मानन्द, भगवान बुद्ध, पृ. 272
11 मज्झिमनिकाय 3, पृ. 153
12 शर्मा, आर.एस., मैट्रियल कल्चर एण्ड सोशिएल फॉरमेशन इन एंशिएंट इंडिया, पृ. 173, 178
13 जोशी, एल.एम., स्टडीज इन द बुद्धिस्ट कल्चर ऑफ इंडिया, पृ. 276
14 वागले, नरेन्द्र, सोसायटी एट द टाइम ऑफ द बुद्धा, पृ. 167

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 2, February 2017

---

15 शर्मा, आर.एस., पर्सपेक्टिव इन सोशिएल एण्ड इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ अर्ली इंडिया, पृ. 96

16 रॉय, एन.आर., आयरन टैक्नोलॉजी वाज नाइदर क्वालिटिवली नॉर क्वाटिटिवली डाइवर्सीफाइड इनफ जव ब्रींग सिगनिफिशेंट सोशल चेंज, पृ. 133

17 विनयपिटक भाग–प्प, पृ. 144

18 रॉय, एन.आर., टैक्नोलॉजी एण्ड सोशल चेंज, पृ. 70

19 घोष, ए., द सिटी इन अर्ली हिस्टोरिक इन इंडिया, पृ. 10

20 चक्रवर्ती, डी.के., द स्टडी ऑफ आयरन एज इन द इंडिया, पृ. 13–14, 20–21

21 पाण्डेय, जी.सी, स्टडीज इन द ऑरिजन ऑफ बुद्धिज्म, पृ. 396

22 काणे, पी.वी., हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, भाग–प्प, पृ. 478

23 ट्रेवर लिंग, द बुद्धा : बुद्धिस्ट सिविलाइजेशन इन एंशिएट इंडिया एण्ड सिलोन, पृ. 104–118

24 गोखले, बी.जी., अर्ली बुद्धिज्म एण्ड द अरबन रिवोल्यूशन, पृ. 19

25 वेबर, एम., द रिलिजन ऑफ इंडिया, पृ. 205

26 गोखले, बी.जी., अर्ली बुद्धिज्म एण्ड द अरबन रिवोल्यूशन, पृ. 7

27 कोसम्बी, डी.डी., द कल्चर एण्ड सिविलाइजेशन ऑफ एशियंट इंडिया, पृ. 108–123

28 सराओ, के.टी.एस., ओरिजिन एंड नेचर ऑफ एंशिएट इंडियन बुद्धिज्म, पृ. 66–67, 70, 83

29 गोखले, बी.जी., अर्ली बुद्धिज्म एण्ड द अरबन रिवोल्यूशन, पृ. 8

30 सराओ, के.टी.एस., ओरिजिन एंड नेचर ऑफ एंशिएट इंडियन बुद्धिज्म, पृ. 87